# "ग्रामीण विकास में कृषि की भूमिका"

डॉ0 प्रेमजीत सिंह दहिया
स0 अध्यापक, जनता इण्टर कॉलिज,
पलड़ी (बागपत)।

ग्रामीण विकास की संकल्पना विकास की व्यापक संकल्पना का एक उप भाग है। विकास वैश्विक स्तर पर व्यक्ति का परिवारों का समुदायों का और राज्यों का वैश्विक इच्छित लक्ष्य है।

विकास एक व्यक्तिनिष्ठ एवं मूल्य आधारित संकल्पना है। अतः विकास के अर्थ के संदर्भ में आम राय संभव नहीं है। विकास की संकल्पना को विभिन्न संदर्भो में अलग–अलग रूप में परिभाषित किया जाता है। सामान्य तौर पर विकास को इच्छित लक्ष्य के तौर पर रेखांकित किया जाता है। चूंकि सांस्कृतिक परिवेश में ही एक निश्चित समय स्थान पर जो इच्छित होता है वह उसी सांस्कृतिक परिवेश में दूसरे स्थान काल पर आवश्यक नहीं है कि इच्छित हो। इसलिए विकास की वैश्विक मान्य परिभाषा सम्भव नहीं है। अतः विभिन्न परिप्रेक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए विकास को अग्र रूप में परिभाषित किया जा सकता है– विकास समाज के संदर्भ में समाज द्वारा इच्छित सामाजिक उद्देश्यों, लक्ष्यों का एक समुच्चय है, जिस समाज प्राप्त करना चाहता है।[1] इस रूप में विकास व्यक्तियों, समुदायों और राष्ट्रों द्वारा है जो कि उनकी संस्कृति, धर्म और विशेष क्षेत्रा में संदर्भित होता है। इस रूप में ग्रामीण विकास, ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों, सम्प्रदायों के जीवन स्तर में गुणात्मक परिवर्तन के लिए इच्छित उद्देश्यों, लक्ष्यों का समुच्च है।

ग्रामीण विकास की संकल्पना ग्रामीण क्षेत्राों के समस्त विकास से सम्बन्धित है। ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर में गुणात्मक परिवर्तन को मुख्य लक्ष्य निर्धारित किया जाता है। यह एक व्यापक व बहुआयामी संकल्पना है और कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रा, ग्रामोण और कुटीर उद्योगों तथा हस्तशिल्प (क्राफ्ट), सामाजिक, आर्थिक आधारभूत ढांचे, सामुदायिक सेवाओं और सुविधाओं और सबसे ऊपर ग्रामीण क्षेत्राों में मानव संसाधन के विकास का घेराव करती है।[2] डॉ0 कटार सिंह ने अपनी पुस्तक, 'रूरल डेवलेपमेन्ट, प्रिंसिपल्स, पोलिसी एण्ड मैनेजमेन्ट' में

---

1 डॉ0 कटार सिंह, रूरल डेवलेपमेन्ट प्रिंसिपल पोलिसी एण्ड मैनेजमेन्ट, सेज पब्लिकेशन दिल्ली 1999, पृ0 सं0 20.

2 डॉ0 कटार सिंह, रूरल डेवलेपमेन्ट प्रिंसिपल पोलिसी एण्ड मैनेजमेन्ट, सेज पब्लिकेशन दिल्ली 1999, पृ0 सं0 20.

3ण् वही पृष्ठ सं0 20

ग्रामीण विकास को बहुत से भौतिक तकनीकी, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और संस्थात्मक कारकों के बीच अर्न्तक्रियाओं का परिणाम बताया है। एक रणनीति के रूप में ग्रामीण विकास, ग्रामीण क्षेत्राों के विशेष गरीब लोगों, वर्गों के आर्थिक, सामाजिक, कल्याण को बेहतर करने की रणनीति है। एक अनुशासन के रूप में ग्रामीण विकास की प्रकृति बहु–अनुशासनिक है जो कि कृषि तथा सम्बन्धित क्षेत्रा, सामाजिक, व्यवहारात्मक, इंजीनियरिंग और प्रबन्धन विज्ञान में अन्तः वर्णित है।[3]

ग्रामीण विकास लोगों के विशेष समूह (लघु किसान, काश्तकार तथा भूमिहीनों) को, समर्थ बनाने की एक व्यूह रचना है, गरीब ग्रामीण औरत तथा आदमी जो स्वयं के लिए करना चाहते हैं तथा जिसकी उन्हें आवश्यकता है, को प्राप्त करने एवं अपने बच्चों के लिए एक व्यूह रचना है। ग्रामीण विकास ग्रामीण क्षेत्राों में जीविका चलाने वाले के बीच सबसे गरीबों की सहायता कर उन्हें ग्रामीण विकास के लाभों तथा नियंत्राण में सहभागी बनाता है।[4]

उपरोक्त विश्लेषण के साररूप में ग्रामीण विकास को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि ग्रामीण विकास वह प्रक्रिया है जो कि ग्रामीण लागों विशेषकर गरीबों के जीवन स्तर में दीर्घकाल तक सुधारात्मक, गुणात्मक परिवर्तन करती है।

ग्रामीण विकास से आशय मूल रूप से तीन प्रमुख मुद्दों से होता है–

क– ग्रामीण क्षेत्राों में शिक्षा स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली तथा आवास जैसी मूलभूत सुविधाओं को विकसित करना।

ख– गांवों में व्याप्त गरीबी को दूर करने हेतु कृषि, कुटीर, उद्योगों का विकास करना एवं रोजगार, अवसर सृजित करना तथा,

ग– देश के प्रशासन में ग्रामीण की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु उनमें चेतना और जागरूकता का संचार करना।

इस प्रकार की व्यवस्था से ही गांव के निवासियों का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास संभव है।

ग्रामीण विकास की अवधारणा के अन्तर्गत ग्रामीण जीवन की गुणवत्ता में सुधार को समावेश किया जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ग्रामीण क्षेत्राा में रहने वाले न्यून आय वर्ग के लोगों के जीवनस्तर में सुधार लाकर उनके विकासक्रम को आत्मपोषित बनाने के प्रयास किये जाते हैं। ग्रामीण विकास वस्तुतः एक ऐसी व्यूह–रचना है जो ग्रामीण जनता विशेषकर निर्धन ग्रामवासियों के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन को उन्नत करने के लिए बनायी गयी है।

---

4 डॉ0 कटार सिंह, रूरल डेवलेपमेन्ट प्रिंसिपल पोलिसी एण्ड मैनेजमेन्ट, सेज पब्लिकेशन दिल्ली 1999, पृ0 सं0 20.

देश में स्वतन्त्राता प्राप्ति से लेकर अब तक ग्रामीण विकास के उद्देश्य से अनेक कार्यक्रम तथा ,योजनाएं प्रारम्भ की गयी हैं। वस्तुतः हमारे समन्वित विकास कार्यक्रम के मार्ग में मुख्यतया गरीबी और बेरोजगारी दो बड़ी गम्भीर समस्याऐं है। योजनाबद्ध विकास के पाँच दशकों बाद भी देश के असंख्य लोगों को गरीबी व बेरोजगारी से छुटकारा नहीं मिल सका है वरन् करोड़ों लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने के लिए विवश हैं।

ग्रामीण विकास वस्तुतः एक विस्तृत एवं व्यापक अवधारणा है जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सभी पहलुओं के विकास से सम्बन्धित है। ग्रामीण विकास के अन्तर्गत कृषक भूमिहीन श्रमिक दस्तकार आदि सभी ग्रामीण वर्गों के विकास को शामिल किया जाता है। अतः ग्रामीण विकास हेतु उन नीतियों तथा कार्यक्रम को अपनाता जाता है। जिनसे कृषि एवं सम्बद्ध क्रियाओं (बागवानी, भूमिविकास, लघु उद्योग, सिंचाई, मिट्टी एवं जल संरक्षण, पशुपालन, दुग्ध उत्पादन, मत्स्य पालन, आदि) का विकास हो सके तथा जो ग्रामीण शिल्प एवं उद्योगों को प्रोन्नत कर सकें।[5]

## ग्रामीण विकास क्यों?

भारत प्राचीन काल से ग्रामीण समुदायों, समाज की भूमि रहा है। वर्तमान काल में भी ग्रामीण समुदाय प्रधान तथा आने वाले समय में भी ग्रामीण समुदाय की प्रधानता रहेगी। यह तथ्य है कि पीछे वदिक काल तक गांव प्रशासन की मूल इकाई रहा है। ऋग्वेद में ग्रामणी (गांव का नेता) नामक अधिकारी का वर्णन है।भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था का प्रभावी ग्रामीण चरित्रा इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि जनसंख्या का अधिकांश भाग गांवों में निवास करता है यथा ग्रामीण जनसंख्या का कुल जनसंख्या में भाग प्रतिशत में निम्न प्रकार है–

भारत में ग्रामीण जनसंख्या का कुल जनसंख्या में भाग प्रतिशत

| क0सं0 | वर्ष | प्रतिशत |
|---|---|---|
| 1. | 1901 | 89.0 |
| 2. | 1951 | 83.0 |
| 3. | 1971 | 80.0 |
| 4. | 1991 | 74.0 |
| 5. | 2001 | 72.0[6] |
| 6. | 2011 | 68.84[7] |

5 विनीत मिश्र, भारत का आर्थिक विकास, जी0आर0, बढ़ला एण्ड सन्स, मेरठ, 2008, पृ0 सं0 354–355.

6 भारत, 2010, पृष्ठ 64.

7 प्रतियोगिता दर्पण वार्षिकी, 2012, पृष्ठ 177.

## कृषि तथा ग्रामीण विकास के मध्य सम्बन्ध

खेती, एक घटक के रूप में, स्वतन्त्राता प्राप्ति के समय से ही भारतीय अर्थव्यवस्था के समग्र विकास पथ को आकार प्रदान करने में निर्णयक भूमिका अदा कर रही है। देश में कृषि क्षेत्रा में कृषि, वानिकी मतस्य उद्योग, कुटुट पालन आदि तत्व शामिल किये जाते हैं जो रेखाचित्रा के द्वारा अग्र प्रकार रेखांकित किये जा सकते हैं–

### कृषि क्षेत्रा के तत्व

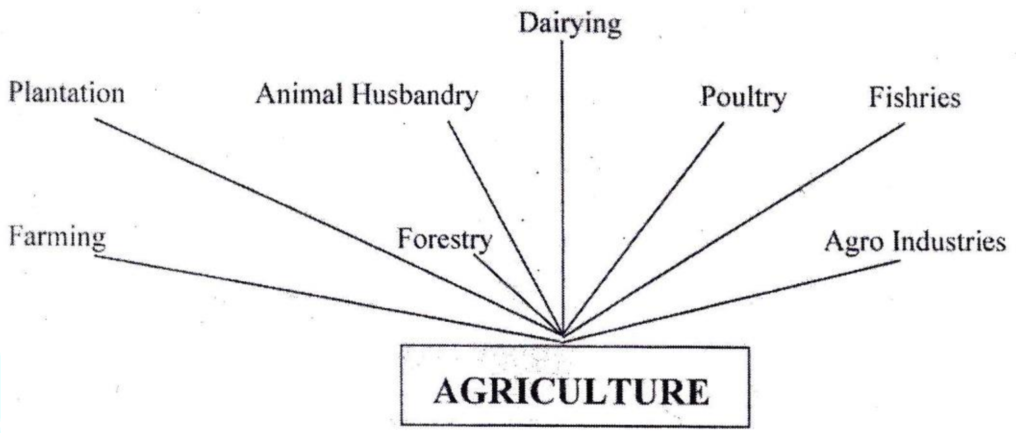


कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था में तथा ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को तीव्र करने में केन्द्रीय स्थान रखती हैं। ग्रामीण विकास को राहका (स्टीमूलेट) करने में इसकी अद्वितीय भूमिका है। कृषि देश की सभी प्रकार की आथिक वृद्धि में सहयोग करती है। खाद्यान्नों की पूति जीवन के लिए, कच्चा माल उद्योगों के लिए विदेश व्यापार में हिस्सा तथा विदेशी मुद्रा की प्राप्ति में सहायक है। कृषि ग्रामीण जनता की जीविका का महत्वपूर्ण स्रोत है तथा गैर कृषि वस्तुओं तथा सेवाओं के लिए बड़ा बाजार उपलब्ध कराती है।

कृषि तथा ग्रामीण विकास अन्तः सम्बन्धित है। कृषि तथा सहायक सम्बद्ध क्षेत्राों में तीव्र विकास ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर को उन्नत करता है। कृषि तथा उद्योगों के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध ग्रामीण विकास तथा उत्पादन के लिए कार्यकुशलता, सकारात्मक दृष्टिकोण के विकास में सहायक बलों के उभविकरण के लिए आवश्यक है। कृषि में विकास से ग्रामीण असमानता में भी कमी आती है।

कृषि तथा ग्रामीण विकास के मध्य सम्बन्ध निम्न रेखा चित्रा से स्पष्ट किया जा सकता है–

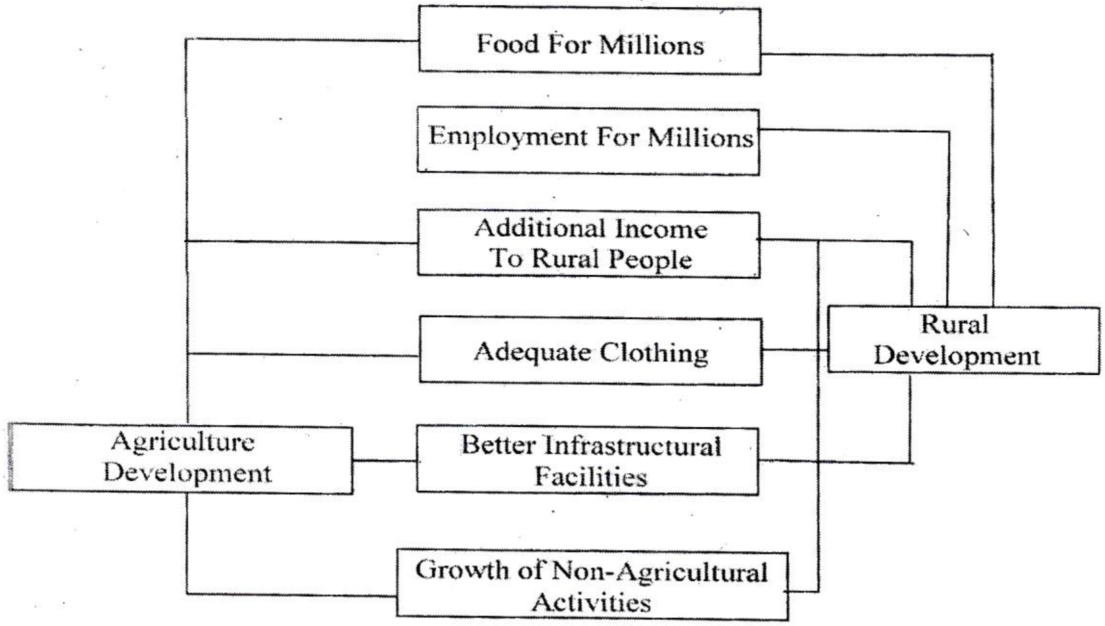


भारत में कुल सकल घरेलू उत्पाद का 1/6 हिस्सा कृषि क्षेत्रा से आता है। देश में आज भी कुछ श्रम शक्ति के 60 प्रतिशत लोगों की आजीविका कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रा पर निर्भर है। 2009–10 के आंकड़ों के आधार पर लगभग 16 प्रतिशत का योगदान कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रा जी0डी0पी0 में करते हैं।[8] कृषि क्षेत्रा निजी क्षेत्रा का सबसे बड़ा व्यवसाय है। निर्यात होने– वाली आय का 10 प्रतिशत हिस्सा इसी क्षेत्रा से आता है तथा अनेक उद्योगों के. लिए इससे कच्चा माल भी मिलता है। इसके अलावा गामीण क्षेत्रा उपभोक्ता सामानों के सबसे बड़े बाजार हैं। घरेलू बचत का सबसे बड़ा स्रोत यही है। सर्वोपरि यह कि कृषि क्षेत्रा ही देश के लिए खाद्य सुरक्षा का एकमात्रा स्रोत है। अतः देश की कोई भी सामाजिक, आथिक विकास की योजना ग्रामीण क्षेत्रा तथा ग्रामीण लोगों को. अनदेखा करके सफल नहीं हो सकती।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी देश की अर्थव्यवस्था के ग्रामीण चरित्रा तथा ग्रामीण जीवन को उन्नत बनाने की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए हरिजन (4 अप्रैल 1936) में लिखते हैं। ‘‘भारत इसके कुछ शहरों में नहीं बल्कि 5,00,000 गांवों में पाया जाता है।[9] गांधी जी का यह कथन सैद्धान्तिक तथा आथिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में आज भी सही है। गांधो जी हरिजन (29 अगस्त 1936) में लिखते हैं ‘‘मैं कहना चाहूंगा कि यदि गांवों का पतन होता है तो भारत का भी पतन निश्चित है। भारत का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा। विश्व में भारत के प्रत्येक मिशन का पतन हो जाएगा। गांवों का पुनरूद्धार तभी संभव है जब इसका और अधिक शोषण न हा।[10] गांवों के सवागीण विकास को कृषि क्षेत्रा को प्राथमिकता प्रदान करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

---

[8] उदृत, भारत, 2010, पृष्ठ 64

[9] उधृत डॉ0 कटार सिंह, वही, पृष्ठ–23

[10] वही, पृष्ठ–23